श्रीमद्भगवद्गीता आदिशास्त्र क्यों और कैसे?

श्री परमहंस आश्रम शक्तेषगढ़ की प्रातःकालीन जनसभा में काशी के एक भाविक पंडित जी की जिज्ञासा पर कि ''गीता संसार की पहली पुस्तक किस प्रकार है?'' दिनांक 10 जनवरी, सन् 2010 को पूज्य महाराजश्री का प्रवचन।

आपका प्रश्न स्वाभाविक ही है। प्रायः लोग इतना ही जानते हैं कि द्वापर युग में महाभारत के युद्धस्थल में शस्त्र चलने की तैयारी के समय भगवान् श्रीकृष्ण ने अपने प्रिय भक्त अर्जुन के प्रति गीता का उपदेश किया। इसके पूर्व बहुत सारा साहित्य लिखने में आ चुका था, तो गीता सृष्टि का आदिशास्त्र कैसे है?

स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण ने गीता के अध्याय चार में इस प्रश्न को स्पष्ट किया है-

इमं विवस्वते योगं प्रोक्तवानहमव्ययम्।
विवस्वान्मनवे प्राह मनुरिक्ष्वाकवेऽब्रवीत्।। (गीता, 4/1)

भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं कि इसी अविनाशी योग को मैंने सूर्य से कहा था। सूर्य से इसे ही मनु ने, मनु से इक्ष्वाकु ने और इक्ष्वाकु से राजर्षियों ने जाना। इस महत्वपूर्ण काल से यह अविनाशी योग विस्मृतप्राय हो चला, वही तेरे प्रति कहने जा रहा हूँ। इस अविनाशी योग का उपदेश भगवान् ने सूर्य को किया था और भगवान् ने उसी का उपदेश अर्जुन के प्रति किया। पहले भी भगवान् ने ही कहा था और भगवान् ने ही पुनः उसी को

अर्जुन के प्रति कहा। गीता में वही आदिज्ञान होने से यह सृष्टि का आदिशास्त्र है।

मनु से जायमान होने से हम-आप मनुज कहलाते हैं। मनुज का अर्थ है- मनु से जायमान, मनु की संतान। मनु के औरस पुत्रों की वंश-परम्परा में यह सृष्टि है। पृथ्वीतल पर कहीं भी मनुष्य का जन्म हुआ है, वह मनु की वंशलता के अन्तर्गत है। अब काला, गोरा या गेहुँआ रंग; चपटी या ऊँची नाक इत्यादि शारीरिक विभिन्नतायें जलवायु की देन है। पृथ्वी पर जहाँ अति उष्ण तापमान है, रंग काला हो गया; जैसे अफ्रीका में है। अत्यधिक शीत है तो रंग पूर्णतः बर्फ की तरह सफेद हो गया। भारत में प्रायः सभी जलवायु पायी जाती है। कश्मीर क्षेत्र के लोगों का रंग गोरा, मध्य भारत में गेहुँआ तो दक्षिण भारतीयों का रंग काला होता गया। यह सब जलवायु की देन है किन्तु हैं सभी मनु के ही वंशलता के अन्तर्गत।

महाराजा मनु को भगवान् सूर्य से विरासत में गीता मिली थी। उन्हीं सूर्य से हनुमान जी ने भी विद्या पढ़ी। गीतोक्त ज्ञान के अतिरिक्त सूर्य के पास था भी क्या? अतः हनुमान ने भी वही पढ़ा, जो गीता में है।

महाराजा मनु दीर्घजीवी थे। उन्होंने एक प्रलय देखा। आरम्भ में पृथ्वी पर कालिमा थी या लालिमा? उजाला था कि अँधेरा? इसे कौन बताये? मनुष्य की सोच-समझ और बुद्धि जब से सक्रिय हुई, तब से प्रलय है, पतन है; उत्थान है, व्यवस्थित है- इत्यादि प्रश्न आने लगे। इस प्रकार मनु ने एक प्रलय देखा। प्रलय में भी महाराजा मनु ने अपनी सृष्टि को बचा लिया था।

भगवान् ने एक हल्की-सी परीक्षा ली, और जब सक्षम पाया तो उनसे कहा कि प्रलय होनेवाला है किन्तु मैं तुम्हें बचा लूँगा। एक सुदृढ़ नाव में सृष्टि-बीज को रख लो, सप्तर्षियों को भी बैठा लो। नाव उत्ताल तरंगों पर

तैरने दो। मैं तुम्हें मत्स्य रूप में दिखायी दूँगा। मेरे शिर पर सींग होगी। उस श्रृंग में नाव को बाँध देना। जहाँ नाव बँधी, मत्स्य भगवान् के रूप में परिवर्तित हो गये और लगे उपदेश देने! भगवान् के श्रीमुख से वेद प्रसारित होने लगा जो बाद में गीता में वर्णित ज्ञान का विस्तार ही था। उन सूक्तियों को महाराजा मनु संकलित करने लगे। आदि अविनाशी योग जिसे भगवान् ने गीता के रूप में पुनर्प्रकाशित किया, भगवान् के श्रीमुख से प्रसारित है और उसी का विस्तृत स्वरूप वेद भी भगवान् के मुख से प्रसारित हुए। महाराजा मनु ने इसका नाम श्रुति रखा कि इसे श्रवण करें, भूल जायँ तो पुनः श्रवण कर लें; किन्तु गीता (प्रकारान्तर से आदि अविनाशी योग) विस्मरण की वस्तु नहीं है। यह सदा स्मृति-पटल पर विद्यमान रहे तो आपका सदा-सदा के लिये कल्याण ही होगा। आप अपने अमृत स्वरूप को प्राप्त कर लेंगे। इसलिये इसका नाम स्मृति रखा।

स्मृति नामकरण का भी एक कारण था। उस समय कागज-कलम नहीं था। 'लिखा जा सकता है'- यह कल्पना भी नहीं थी। कही हुई बात तो याददाश्त अर्थात् स्मृति में ही धारण की जा सकती थी, अन्य कोई तरीका नहीं था। इसीलिये उन्होंने स्मृति की परम्परा देते हुए इक्ष्वाकु से कहा, उनसे राजर्षियों ने जाना; इसीलिये गीता मनुस्मृति कही जाती है। भगवान् ने कहा- वही तेरे प्रति कहने जा रहा हूँ। वेद बाद में, मनु की वृद्धावस्था में मिला किन्तु गीता उन्हें विरासत में जन्म के साथ, होश सँभालने के साथ मिल गयी थी, इसलिये गीता आदिशास्त्र है।

विधाता ने भी वेद रचे थे। श्रीमद्भागवत, तृतीय स्कन्ध, बारहवें अध्याय में है कि उन्होंने ऋक्, यजुः, साम और अथर्ववेद रचा। इसी प्रकार उन्होंने आयुर्वेद, धनुर्वेद, गान्धर्ववेद और स्थापत्यवेद उत्पन्न किया। विधाता

सृष्टि के रचयिता थे। उनके वेद में सृष्टि की संरचना तथा सृष्टि की सामाजिक व्यवस्था का विवरण है। प्रलय में सृष्टि अर्थात् विधाता का कारखाना ही डूब गया। उन्हें तन्द्रा आ गयी। उसी समय हयग्रीव नामक एक असुर आया, विधाता का वेद उठा ले गया। भगवान् ने उस असुर का वध किया और विधाता का वेद विधाता को दे दिया। (देखें- श्रीमद्भागवत, अष्टम स्कन्ध, चौबीसवाँ अध्याय, श्लोक इकसठ) किन्तु विशुद्ध वेद मत्स्य भगवान् द्वारा प्रसारित वेद जो अविदित तत्त्व को विदित करा दे, मोक्ष दिला दे- गीता है।

गीता में विधाता के वेद का भी वर्णन है। गीता, अध्याय दो के इकतालीसवें श्लोक में भगवान् कहते हैं कि भोगों में तन्मय अविवेकी मनुष्यों की बुद्धि अनेक शाखाओंवाली होती है। वे वेद के फलश्रुति में अनुरक्त, स्वर्ग को ही श्रेष्ठ माननेवाले भजन में की जानेवाली एक नियत क्रिया के स्थान पर अनेक क्रियाओं का विस्तार कर लेते हैं। वे जन्म-मृत्युरूपी अनन्त फल को प्राप्त होते हैं।

उन्हें जन्म-मृत्युरूपी फल क्यों प्राप्त होता है? इस पर कहते हैं- **'त्रैगुण्यविषया वेदा'** (गीता, 2/45)- वेद तीन गुणों तक ही सीमित है। इसलिये अर्जुन! तू तीनों गुणों से ऊपर उठ। अर्जुन की जिज्ञासा थी कि हम ही उठें या कोई उठा भी है? उठा तो उसने क्या पाया? इस पर भगवान् कहते हैं-

यावानर्थ उदपाने सर्वतः सम्प्लुतोदके।
तावान्सर्वेषु वेदेषु ब्राह्मणस्य विजानतः।। (गीता, 2/46)

सब ओर से परिपूर्ण स्वच्छ जलाशय प्राप्त हो जाने पर गड्ढा-गड्ढी इत्यादि क्षुद्र जलाशयों से मनुष्य का जितना प्रयोजन रह जाता है, अच्छी

प्रकार ब्रह्म को जाननेवाले ब्राह्मण का वेदों से उतना ही प्रयोजन रहता है। वेदों से तू ऊपर उठ, ब्रह्म को जान, ब्राह्मण बन! ब्राह्मण एक स्थिति है। पहले गीतोक्त साधना से भजन की जागृति है, बाद में क्रमशः चलते हुए अविदित परमात्मा को विदित करना वेद है; किन्तु जानकारी के पश्चात् उन महापुरुष के लिये वेद का कोई प्रयोजन नहीं रह जाता।

भजन की यह जागृति- हृदय में प्रसारित वेद- अन्तरंग है, किसी-किसी विरले भाग्यवान के लिये ही है। समृद्धिपूर्ण जीवन तथा पुण्य अर्जन के लिये ब्रह्माजी द्वारा रचित, पुस्तक रूप में प्राप्त, लोकविश्रुत चार वेद हमारी संस्कृति हैं, समाज की आधारशिला हैं और शेष समाज इन्हीं से आशावान् है किन्तु पूर्णत्व प्राप्ति के लिये मत्स्य भगवान् द्वारा प्रसारित आन्तरिक वेद आवश्यक है जिसकी विधि गीता है, जिसका यथावत् भाष्य 'यथार्थ गीता' है।

विभिन्न देश-काल के महापुरुषों की वाणियाँ भाषाभेद होते हुए भी इसी आन्तरिक वेद के पर्याय हैं और उन सबके द्वारा गीता का ही सत्य उद्भासित होता रहा है। विशुद्ध वेद के इस स्वरूप को भगवान् ने गीता में स्पष्ट किया है-

ऊर्ध्वमूलमधःशाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम्।
छन्दांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित्।। (गीता, 15/1)

अर्जुन! **'ऊर्ध्वमूलम्'** - ऊपर परमात्मा जिसका मूल है, **'अधःशाखम्'** - नीचे प्रकृति जिसकी शाखा-प्रशाखा है- यह संसार पीपल जैसा वृक्ष है, वेद जिसके पत्ते हैं। क्योंकि प्रकृति के जिस अन्तिम कोपल पर आप हैं, जहाँ आपका जन्म हुआ है, जब आप गीतोक्त साधना में प्रवृत्त होंगे, जिस स्तर या परिस्थिति में आप हैं, वहीं से अपौरुषेय वाणी आपके हृदय में उतरने

लगेगी, भगवान् आपका मार्गदर्शन करने लगेंगे। इसीलिये आन्तरिक वेद अपौरुषेय हैं, परमात्मा का सीधा प्रसारण हैं। उन्हें आप समझते जायँ। क्रमशः उन्हीं के निर्देशन में चलते हुए मूल परमात्मा का स्पर्श मिलता है, उसमें स्थिति मिलती है। इसलिये जो मूलसहित इस वृक्ष को जानता है, वह पूर्ण ज्ञाता है, वेदवित् है। अगले ही श्लोक में भगवान् श्रीकृष्ण अपने को वेदवित् कहते हैं अर्थात् यह स्थिति प्रत्येक साधक के लिये सुलभ है।

सारांशतः विशुद्ध वेद अपौरुषेय है। यह वेद पुस्तक नहीं, एक स्थिति है। भगवान् कहते हैं-

सर्वस्य चाहं हृदि सन्निविष्टो
मत्तः स्मृतिर्ज्ञानमपोहनं च।
वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यो
वेदान्तकृद्वेदविदेव चाहम्।। (गीता, 15/15)

अर्जुन! मैं सबके हृदय-देश में समाविष्ट होकर निवास करता हूँ। बुद्धि तो सबके पास है; किन्तु वह बुद्धि जो परमात्मा की स्मृति दिला सके वह स्मृति, वास्तविक जानकारी अर्थात् ज्ञान और विकारों से निर्लेप रहने की क्षमता मुझसे होती है। **'सर्वैः वेदैः'**- सब वेदों द्वारा **'अहमेव वेद्यः'**- मैं ही एक जानने योग्य परमतत्त्व हूँ। मुझे जानकर जब जाननेवाली सत्ता अलग नहीं रह गयी तो **'वेदान्तकृत्'**- वेद का भी अन्त मैं ही हूँ। अन्त में सहज स्वरूप परमात्मा ही शेष रहता है। **'वेदविदेव चाहम्'**- मैं ही वेदवित् हूँ। यही है परमहंस की स्थिति, सद्गुरु की स्थिति। वास्तव में वेद अपौरुषेय था, आज भी वेद अपौरुषेय है और भविष्य में भी रहेगा। गीता के अनुसार जब आप साधना में प्रवृत्त हो जायेंगे, अपौरुषेय वाणी (वेद) आपके हृदय में जागृत हो जायेगी। आरम्भ में उसकी जागृति कैसे होती है?-

इस पर भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं-

अहं सर्वस्य प्रभवो मत्तः सर्वं प्रवर्तते।
इति मत्वा भजन्ते मां बुधा भावसमन्विताः।। (गीता, 10/8)

अर्जुन! मैं सम्पूर्ण जगत् की उत्पत्ति का कारण हूँ। मुझसे ही सम्पूर्ण जगत् चेष्टा करता है- ऐसा मानकर श्रद्धा-भक्ति से युक्त विवेकीजन मेरा निरन्तर भजन करते हैं। भजन कैसे करते हैं? इस पर वे अध्याय 9/14 में सतत् कीर्तन-भजन करना तथा दसवें अध्याय में कहते हैं-

मच्चित्ता मद्गतप्राणा बोधयन्तः परस्परम्।
कथयन्तश्च मां नित्यं तुष्यन्ति च रमन्ति च।। (गीता, 10/9)

अन्य किसी को स्थान न देकर मुझमें ही निरन्तर चित्त को लगानेवाले, मुझमें ही प्राणों को लगानेवाले, मन-बुद्धि-चित्त-अहंकार-अन्तःकरण को मुझमें लगानेवाले, सदैव परस्पर मेरी चर्चा करते हुए, मेरी क्रियाओं को परस्पर बोध कराते हुए मेरा गुणगान करते हुए सन्तुष्ट होते हैं- यह है भजन! अभी आरम्भिक अवस्था में लोग न आसन लगाते हैं, न नाम जपा न ध्यान धरा, केवल इतना ही किया कि निरन्तर मुझमें ही रमण करते हैं, चिन्तन करते हैं।

तेषां सततयुक्तानां भजतां प्रीतिपूर्वकम्।
ददामि बुद्धियोगं तं येन मामुपयान्ति ते।। (गीता, 10/10)

निरन्तर मेरे ध्यान में लगे हुए तथा निरन्तर मेरी चर्चा में लगे हुए, स्मरण में लगे हुए तथा प्रेमपूर्वक भजनेवाले उन भक्तों को मैं वह बुद्धियोग देता हूँ जिससे वे मुझे प्राप्त होते हैं अर्थात् योग की जागृति ईश्वर की देन है। आप बुद्धियोग कैसे देते हैं?-

तेषामेवानुकम्पार्थमहमज्ञानजं तमः।
नाशयाम्यात्मभावस्थो ज्ञानदीपेन भास्वता।। (गीता, 10/11)

उनके ऊपर पूर्ण अनुग्रह करने के लिये मैं उनकी आत्मा से अभिन्न खड़ा होकर अज्ञान से उत्पन्न अंधकार को ज्ञानरूपी दीपक के द्वारा प्रकाशित कर नष्ट करता हूँ। यह है भजन की जागृति!

वस्तुतः किसी स्थितप्रज्ञ योगी के द्वारा जब तक परमात्मा आपकी आत्मा से जागृत होकर पल-पल पर संचालन नहीं करता, रोकथाम नहीं करता, तब तक यथार्थ भजन आरम्भ ही नहीं होता। वैसे तो भगवान् सर्वत्र से बोलते हैं। यदि ऐसा महापुरुष आपको प्राप्त नहीं है तो वे स्पष्ट नहीं बोलेंगे। भगवान् आत्मा से अभिन्न होकर बोलने लगते हैं, अपौरुषेय वाणी उतरने लगती है, इसी का नाम वेद है; किन्तु आरम्भ के लिये जागृति की विधि गीता है, इसलिये गीता आदिशास्त्र है।

वेद ब्रह्मा जी की रचना है; किन्तु स्वयं ब्रह्मा जिनकी नाभिकमल से उत्पन्न हुए, उन्हीं भगवान् के श्रीमुख का सीधा प्रसारण गीता है इसलिये भी गीता आदिशास्त्र है।

।। ॐ ।।